देवनागरी लिपि का नामकरण एवं इतिहास

दाऊद एहमद

अनुसंधित्सु

सामान्यतः लिपि आंगल भाषा के script का हिंदी अनुवाद है और उर्दू भाषा में इसे रस्मुलखत भी कहा जाता है |लिपि किसी भी भाषा को अंकित करने का एक सशक्त माध्यम भी है जो ध्वन्यात्मक चिन्हों की एक ऐसी सामूहिक व्यवस्था है जिसके अंतर्गत किसी भाषा विशेष को लिखित आधार प्रदान कर उसे पठनीय बनाती है तथा बिना लिपि के भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है |इसीलिए भाषा केलिए लिपि एक महत्वपूर्ण घटक होकर उसे सजीव रूप प्रदान करती है |

भारत में लेखनकला एवं ज्ञान के अत्यंत प्राचीनतम उल्लेख प्राप्त होते हैं |प्रायःजैन एवं बौद्ध साहित्य में अनेक लिपियों का उल्लेख मिलता है |जैनों के पन्नवणसूत्र में अठरह और बोद्धों की पुस्तक ललित विस्तार में कुल चोंसठ लिपियों का उल्लेख मिलता है |इससे पूर्व भी हड़प्पा और मोहनजोदारो की खुदाई में भारतीय लिपियों के प्रमाण मिले हैं |भारत की दो प्राचीन एवं प्रचलित लिपियों का स्वरूप ही आज उपलब्ध है जो ब्राह्मी एवं खारोष्टी के नाम से पहचानी जाती है |इनका प्राचीनतम उपलब्ध रूप सम्राट अशोक के शिला लेखों में देखने को मिलता है |इससे यह प्रमाणित होता है कि भारत में लिपि की परंपरा का इतिहास कई हज़ार वर्ष पुराना रहा है |

देवनागरी लिपि भारत में ऐतिहासिक रूप से गौरवशाली लिपि मानी जाती है |इस लिपि का विकास ब्राह्मी लिपि की उत्तरी शाखा से

हुआ है |पूर्व में यह नगरी नाम से जानी जाती थी परन्तु बाद में देव-भाषा संस्कृत केलिए जब इसका प्रायोग होने लगा तब से इसे देवनागरी कहा जाने लगा और दक्षिण में यह 'नंदिनागरी' के नाम से परिचित है |वर्तमान में यह लिपि हमारे सम्मुख 'देवनागरी' के नाम से प्रचलित है |यह नाम इसे कैसे मिला इस सम्बन्ध में विद्वानों एवं इतिहासकारों में काफ़ी वाद-विवाद हुआ|प्रत्येक भाषाविद ने इस नामकरण के विषय में कोई न कोई तथ्य जोड़कर इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है| देवनागरी या नागरी लिपि के नामकरण के विषय में विभिन्न प्रकार के मत दृष्टव्य हैं |

ओझा के अनुसार– 'नागरी' नाम कबसे प्रचलन में आया, इस सम्बन्ध में कुछ निश्चित नहीं है |बल्कि तांत्रिक कल में 'नागर'शब्द की चर्चा देखने को मिलती है |'नित्याषोड़शिकाणव की 'सेतुबंध' नमक रचना में टीकाकार भास्करानंद एकार का त्रिकोण रूप 'नागर' (नगरी) लिपि में होना बताते हैं |*इसके अतिरिक्त 'बातुलागम' की टीका में यह उल्लेख है कि शिव मन्त्र 'ह्री' के अक्षरों से शिव की मूर्ति केवल 'नागर' (नागरी) लिपि से बन सकती है दूसरी लिपियों से बन नहीं सकती' इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन तांत्रिक युग में 'देवनागरी' के लिए नागर नाम प्रचिलित था| इसका नागर नामकरण क्यों पड़ा यह पूर्णरूप से स्पष्ट नहीं है |

इस विषय के सम्बन्ध में राधेश्याम शास्त्री का विचार है कि 'देवताओं की मूर्तियाँ बनने के पूर्व उनकी उपासना सांकेतिक चिन्हों द्वारा होती थी,जो त्रिकोण तथा वक्रों आदि से बने हुए यंत्रों के, जो देवनगर कहलाता था –मध्य में लिखे जाते थे| देवनगर के मध्य लिखे जाने वाले अनेक प्रकार के सांकेतिक चिन्ह कालांतर में उन-उन नामों

के पहले अक्षर मने जाने लगे और 'देवनगर' के मध्य उनका स्थान होने के कारण उनका नाम 'देवनागरी' हुआ |

इस मत के सम्बन्ध में ओझा जी लिखते है कि-यह लेख बड़ी गवेषणा के साथ लिखा गया है और युक्तियुक्त अवश्य है ,परन्तु जबतक यह सिद्‌ध न हो कि जिन-जिन तांत्रिक पुस्तकों से अवतरण उद्‌धृत किये गए हैं,वे वैदिक साहित्य के समय के पहले के या कम से कम मोर्यकाल से पहले के हैं, तब तक हम उनका मत स्वीकार नहीं कर सकते हैं|''

कुछ विद्‌वानों ने 'नागरीलिपि' का नामकरण नागर ब्राह्मणों से जोड़कर प्रमाणित करने का प्रयास किया है |लेकिन ऐतिहासिक साक्ष्यों के आभाव में यह कल्पना ही माना गया है |कुछ विद्‌वानों ने बोद्‌धों के 'ललित-विस्तार'ग्रन्थ में 'नागलिपि' के आधार पर यह अनुमान लगाया कि 'नागलिपि'शब्द से ही 'नागरीलिपि'का आविर्भाव हुआ होगा |किन्तु इसपर कटाक्ष करते हुए डॉ. एल. डी. वार्नेट उक्त दोनों लिपियों का कोई अंतर्संबंध नहीं मानते हैं |इसके आलावा 'नागलिपि और नागरीलिपि' शब्द की संरचना के सम्बन्ध में और कोई तर्क या विचार देखने को नहीं मिलता |

कुछ विद्‌वान् इसे अभिजात एवं कुलीन वर्ग की लिपि मानकर इसका प्रयोग गाँव में न होकर नगरों में होता था जिस के कारण इसे 'नगर की लिपि' कहा गया |कहीं न कहीं यह बात तर्कसंगत प्रतीत होती है लेकिन प्रमाणिक तथ्यों के अभाव में इसे अस्वीकार किया जाता है |कतिपय विद्‌वान देववाणी संस्कृत भाषा से इसका संपर्क होने से 'देवनागरी' नाम मानते हैं |लेकिन यहाँ 'देव'शब्द की सार्थकता पर पूर्णरूपेण प्रकाश पड़ता है अतः 'नागरी' शब्द की सार्थकता अस्पष्ट है |

डॉ.धीरन्द्र वर्मा के शब्दों में– 'इस लिपि केलिए देवनागरी या नागरी नाम पड़ने के कारण वास्तव में अनिश्चित हैं|''

बाबूराम सक्सेना– 'नागरी नाम की व्युत्पत्ति का अभीतक निश्चय नहीं हो सका है |'' इस प्रकार सभी विद्वानजन इस बात को घुमा-फिराकर तथ्यों के आभाव में देवनागरी नामकरण स्पष्ट नहीं कर पाए |

प्रायः देवनागरी केलिए कई पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाता है– देवनागरी, देवनागर, लोकनागरी ,नंदीनागरी तथा हिंदी लिपि भी कहा जाता है |उपरोक्त नामों में 'नागरी' नामकरण ही ख्याति प्राप्त होकर अपने पूर्ववर्ती संक्षेप्त रूप के कारण लोगों में पर्याप्त प्रचिलित है |

देवनागरी लिपि के प्राचीनतम लेख भारत के दक्षिणी प्रान्तों में मिले है |इससे स्पष्ट है की देवनागरी जन्म के साथ ही उत्तर से दक्षिण तक फ़ैल गई थी |यह उसकी लोकप्रियता का एक अनूठा प्रमाण है | उत्तर भारत में देवनागरी लिपि में कोई भी लेख दसवी सदी के पूर्व का नहीं मिलता |किन्तु दक्षिणी भारत में आठवीं सदी के लेख भी प्राप्त होते हैं |उदाहरणत: देवनागरी के प्राचीनतम लेख सबसे पहले राष्ट्रकूट वंश के राजा दन्तिदुर्ग के सामनगढ़ से 754 ई.के दानपत्रों से मिले | उसके बाद राष्ट्रकूट के राजा गोविन्द राज द्वितीय के धुलिया से 780 ई. के दानपत्रों से मिले |इसके बाद पैठण और बनिगांवसे मिले हुए राष्ट्रकूट के राजा गोविन्द तृतीय के 794 ई. व 808 ई. के दानपत्रों में और तदन्तर राष्ट्र कूट के राजा ध्रुराज अमोध्वर्ष और उसके शिलार्वंशी सामंत पुल्लशक्ति के क्रमश: 835 ई. 843 ई. तथा 851 ई. के दानपत्रों में उपलब्ध है|

इसके अतिरिक्त आठवीं शताब्दी से लेकर आजतक दक्षिण भारत से उत्तर भारत तक नागरी लिपि का व्यापक प्रचार एवं इसकी जनप्रियता का प्रत्यक्ष प्रमाण हमें 1017 ई. में महमूदपुर (लाहौर) से महमूद गज़नवी ने एक चांदी का ऐसा सिक्का चलाया था|जिसकी एक पीठ पर नागरी लिपि में "**अव्यक्तमेकंमुहम्मद अवतार नृपति महमूद"** तथा दूसरी ओर **"अयम टंकम महमदपुर घटिले हिजरियेन संवति 418"** छ्पा था|इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि महमूद गज़नवी ने नागरी लिपि की समकालीन लोकप्रियता को ध्यान में रख कर इसे अपने सिक्के पर अंकित किया है |

इस प्रकार ओझा जी के अनुसार नागरी लिपि आठवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में विस्तृत रूप में लिखी हुई मिलती है |परन्तु उससे पहले भी इस लिपि का व्यवहार होता रहा होगा|क्यूंकि गुजरात के गुर्जर्वंशी राजा जयभट्ट तृतीय के 706 ई.के दानपत्र जो दक्षिणी शैली की पश्चिमी लिपि में है,उक्त राजा के हस्ताक्षर 'स्वहस्तो मम श्री जय भटस्य' नागरी लिपि में ही हैं |इस प्रकार देवगिरी के यादवों तथा विजय नगर के राजाओं के दानपत्रों में भी इस लिपि का प्रयोग मिलता है |

उत्तर भारत में प्राचीन नागरी का सबसे प्राचीनतम रूप कन्नोज के 898 ई. के दानपत्र में प्राप्त होते हैं |उसके बाद के अनेक शिलालेखों व दानपत्रादि में उसके नमूने उपलब्ध हैं|

प्राचीन देवनागरी का परिचय देते हुए ओझा जी लिखते हैं कि '10वीं सदी के उत्तर भारतवर्ष की नागरी लिपि में कुटिल लिपि की भांति अ, आ, ध, प, म, य, ष, व, स, के सर दो अंशों में विभक्त मिलते हैं ,परन्तु 11वीं सदी से यह दोनों अंश मिलकर सर की एक लकीर बन जाती है और प्रत्यक अक्षर का सर उतना लम्बा रहता है जितनी कि अक्षर की

चौडाई होती है |अतः 11वीं सदी की नागरी लिपि वर्तमान नागरी से मिलती-जुलती है और इसी वर्तमान नागरी का स्वरूप शताब्दियों के प्रयोग पर आधारित उसके क्रमिक विकास का प्रतिफलन है|12वीं सदी से लेकर अबतक नागरी लिपि बहुधा एक ही रूप में चली आई है, तो भी लेखन-शैली देश-भेद से कुछ अंतर रह ही जाता है|'

निष्कर्षतः नगरी लिपि का आधार अतिप्राचीन है वह अपनी ऐतिहासिक यात्रा में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, के अतिरिक्त कई समृद्ध आधुनिक भारतीय भाषाओँ यथा मराठी, भोजपुरी, नेपाली, डोगरी, हिंदी आदि जैसी भाषाओँ की संवाहिका बनकर अपनी सेवाएं अंजाम दे रहीं हैं|नागरी लिपि अपना शुद्ध वैज्ञानिक आधार लिए अपनी एकरूपता की विशिष्टता को बनाये हुई है |संसार की कोई भी भाषा इस लिपि के द्वारा सहजतापूर्वक लिखी जा सकती है |जो इसकी ध्वनिसम्पन्नता को दर्शाता है |अतः वर्तमान में देवनागरी लिपि भारत देश की राष्ट्रीय लिपि के रूप में गोरवान्वित है |